International Journal of Applied Research 2015; 1(12): 661-663

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(12): 661-663
www.allresearchjournal.com
Received: 13-09-2015
Accepted: 15-10-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हि प्र

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हि प्र

आचार्य शुक्ल की आलोचना दृष्टि

डॉ. शिवदत्त शर्मा

हिन्दी साहित्य में उत्कृष्ट आलोचकों अथवा समीक्षकों के स्तुत्य प्रयासों से हिन्दी साहित्य आज विश्व साहित्य के श्रेष्ठ साहित्य में गिना जाता है। आलोचना से एक ओर साहित्य में प्रांजलता आती है वहीं साहित्य में उच्च कोटि के साहित्यसृजन की प्रवृत्ति भी बढती है तथा साहित्य में श्रेष्ठ रचनाएं विकसित होतीं हैं।हिन्दी साहित्य में कुछ अच्छे उच्च कोटि के समीक्षकों के कारण हिन्दी साहित्य विश्व के सर्वाधिक पढे जाने वाले साहित्य की कोटि में आता है।उन गिने चुने आलोचकों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का नाम सर्वोपरि गिना जाता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल मूर्धन्य विद्वान होने के साथसाथ एक स्वतन्त्र चिन्तक एवं विश्लेषक थे। उन्हें भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र का ज्ञान था तथा अपने स्वतन्त्र चिन्तन के कारण हिन्दी आलोचना को दिशा प्रदान करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने समकालीन आलोचकों के लिए न केवल पथप्रदर्शन किया अपितु आलोचना के स्तर को भी उन्नत कर उसे गरिमा पूर्ण बना दिया।1

रस–मीमांसा एवं चिन्तामणि–1 तथा चिन्तामणि–2 आदि उनकी प्रसिद्ध आलोचनात्मक रचनाएं हैं। चिन्तामणि में उन्होंने काव्यशास्त्र पर आधारित अलंकार,साधारणीकरण,काव्य में रसात्मकता एवं रसनिष्पत्ति आदि विषयों पर गम्भीर एवं सारगर्भित विवेचन किया है। रस–मीमांसा में उन्होंने रस पर आधारित विस्तार पूर्वक चर्चा की है। इसी प्रकार से उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास में उन्होंने व्यावहारिक,व्याख्यात्मक आलोचना तथा जायसी ग्रंथावली तथा भ्रमर गीतसार की भूमिकाओं में क्रमशः जायसी और सूरदासके काव्यपक्ष का सुन्दर उद्घाटन किया है।

आचार्य रामचन्द्र मूलरूप से रसवादी आलोचक माने जाते हैं। वे उन समीक्षकों में से हैं जो रस को मुक्त कण्ठ से काव्य की आत्मा मानते हैं। उन्होंने काव्य में रीति,वक्रोक्ति, अलंकार आदि को रस का सहायक मात्र माना है तथा इनके` मर्यादित उपयोग को ही स्वीकार किया है।एक प्रसिद्ध विद्वान के विचार उनकी आलोचना दृष्टि पर द्रष्टव्य हैं–

आचार्य शुक्ल ही हिन्दी के पहले समर्थ आलोचक हैं, जिन्होंने अपनी सजग ऐतिहासिक चेतना,सूक्ष्म उद्भावना–शक्ति तथा तीव्र समीक्षक दृष्टि के द्वारा परम्परा के वर्तमान कालीन प्रवाहमान सूत्रों को ग्रहण कर भारतीय काव्यशास्त्र का युग की आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों की मांग के अनुरूप नवीन पदावली में वैज्ञानिक विवेचन किया। हिन्दी को सर्वप्रथम मौलिक काव्यशास्त्र से साक्षात्कार करवाया। अपने प्रतिपादित समीक्षा सिद्धान्तों द्वारा समीक्षा को स्वतन्त्र व्यक्तित्व प्रदान किया तथा हिन्दी समीक्षा के लिए सर्वग्राही तथा सर्वमान्य आदर्श का निर्माण किया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल बहु आयामी प्रतिभा के स्वामी थे। उनकी आलोचनात्मक दृष्टि को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है।

क आचार्य शुक्ल की सैद्धान्तिक समीक्षा
ख आचार्य शुक्ल की व्यावहारिक समीक्षा

उपरोक्त दो भागों में विभाजित उनकी आलोचनादृष्टि को समझना सरल होगा।

क आचार्य शुक्ल की सैद्धान्तिक समीक्षा–आचार्य शुक्ल के सैद्धान्तिक समीक्षा सिद्धान्तों को सरलता से समझने के लिए निम्न लिखित उपशीर्षकों में बांटा जा सकता है।

1 रस तथा रसानुभूति– आचार्य शुक्ल हिन्दी के साथसाथ संस्कृत के भी अच्छे विद्वान थे ,उन्होंने भारतीय काव्य शास्त्र में भरत मुनि से लेकर पण्डित जगन्नाथ तक के सभी आचार्यो ,विद्वानों के रस सम्बन्धी विचारों का गहन अध्ययन किया और अपनी सरलतम रससम्बन्धी अवधारणा प्रस्तुत की।

उन्होंने आधुनिक मनोविज्ञान एवं पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्तों की कसौटी पर भी रस की प्राचीन मान्यताओं को परखने का सफल प्रयास किया। उन्होंने रस सिद्धान्त को सामाजिकता व कर्मठता से जोडकर उसे प्रवृत्ति मार्ग का सिद्धान्त माना। वे रस की परिभाषा देते हुए स्पष्ट करते हैं कि–जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है।हृदय की मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द–विधान करती आई है,उसे कविता कहते हैं।2

उन्होंने रसनिरूपण जैसे गम्भीर विषय को नवनीत बना कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं कि व्यक्ति की वैयक्तिक सत्ता के लोकसत्ता में लीन होने की दशा को रस–दशा कहते हैं। उसे ही भावयोग भी कहते हैं। वे इसी भावयोग को कर्मयोग एवं ज्ञानयोग के समकक्ष मानते हैं। उन्होंने पुरातन रसानुभूति की अवधारणा को भी नए ढंग से वैज्ञानिक आधार पर परखा है उन्होने विभाव अनुभाव,संचारी भाव,स्थायी भाव आदि पर सूक्ष्मता से विचार किया और रस संबन्धी कुछ नई उदभावनाएं प्रस्तुत कीं। भाव को वे प्रत्यक्षबोध,अनुभूति तथा वेग युक्त प्रवृत्ति का संश्लिष्ट रूप स्वीकार करते हैं।3

2 रस का स्वरूप– आचार्य शुक्ल रस की अनुभूति को लौकिक मानते हैं तथा प्राचीन संस्कृत के आचार्यों ने रस को अलौकिक तथा व्रह्मानन्द सहोदर आदि माना है जिसे शुक्ल मात्र औपचारिक ही मानते हैं। उनका मानना है कि रस का संबन्ध अलौकिकता से न होकर सीधे रूप में लौकिक अनुभवों से है।

3 साधारणीकरण– आचार्य शुक्ल ने रस–निरूपण की विवेचना करके जनसाधारण तक रसनिरूपण और रसनिष्पत्ति की प्रक्रिया को सरल बना कर प्रस्तुत किया है। साधारणीकरण नाम से प्रस्तुत यह विवेचन साहित्य जगत में विशेषकर रसनिरूपण में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनके मतानुसार– जब तक किसी भाव का कोई विषय इस रूप में नहीं लाया जाता कि वह सामान्यतः सबके उसी भाव का आलम्बन हो सके ,तब तक उसमें सोद्बोधन की पूर्णशक्ति नहीं आती। इसी रूप में लाया जाना हमारे यहां साधारणीकरण कहलाता हे। यह सिद्धान्त घोषित करता है कि सच्चा कवि वही है जिसे लोक हृदय की पहचान हो,जो अनेक विशेषताओं के बीच मनुष्य जाति के सामान्य हृदय को देख सके। इसी लोक–हृदय में हृदय के लीन होने की दशा का नाम ही साधारणीकरण कहलाता है।4

उनके अनुसार सही अर्थ में कवि वही है जिसे लोकहृदय की परख होती है,और जो लोकसामान्य के आलम्बनों का स्फल विधान करते हैं,वे वास्तव में श्रेष्ठ कवि होते हैं। ऐसे कवि जो केवल आलंकारिक चमत्कार अथवा कोरे उपदेश के लिए काव्य रचना करते हैं उन्हें अधम कवि कहना उचित होगा। स्पष्ट है शुक्ल जी ने अलंकार को मात्र साधन माना है। वे मानते हैं कि रसानुभूति के समय श्रोता या पाठक के मन में आलम्बन आदि विशेष व्यक्ति या वस्तु की मूर्त भावना में न आ कर सामान्यतः व्यक्तिमात्र या वस्तुमात्र के अर्थ संकेत के रूप में आते हैं। इस तरह साधारणीकरण की स्थिति में कवि तथा पाठक के बीच व्याप्त द्वैतभाव मिट जाता है। कवि का मन सबका मन और कवि की अनुभूति सभी की अनुभूति बन जाती है।

4 काव्यआनन्द और उसके सोपान– आचार्य शुक्ल काव्यानन्द को लौकिक मानते हैं। इसे लोकमंगल की संज्ञा भी देते हैं। इस आनन्द की अवस्था को उन्होंने दो वर्गों में बांटा है। क–लोकमंगल की साधनावस्था ख– लोकमंगल की सिद्धावस्था

आचार्य शुक्ल ने रामचरितमानस को लोकमंगल का काव्य स्वीकार किया है। सूरसाहित्य को दूसरे वर्ग में रखा है क्योंकि ऐसे काव्य में प्रायः प्रेम तत्व की प्रधानता होती है।

आचार्य शुक्ल ने अपने प्रसिद्ध निबन्धों काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था तथा तुलसी का भक्ति मार्ग साधारणीकरण और व्यक्ति–वैचित्र्यवाद आदि में अपनी लोकमंगल की दृष्टि को प्रस्तुत किया हैं। उनके अनुसार जिस काव्य में जीवन का चुनौतिपूर्ण चित्रण हो,भीषणता के साथ मनोहरता , कटुता के साथ माधुर्य्र प्रचण्डता के साथ आर्द्रता आदि का समागम होता है ,वही लोकमंगल काव्य है। उनके अनुसार– काव्य कला की पूरी रमणीयता इन दोनों पक्षों के समन्वय के बीच मंगल या सौंदर्य के विकास में दिखाई देती है।

5 कल्पना एवं सौदर्य

आचार्य शुक्ल ने सौंदर्य को वस्तुवादी ,लौकिक एवं जीवन से प्रत्यक्ष सम्बद्ध मानकर उसे सामाजिक भूमि पर प्रतिष्ठित किया है। उनके अनुसार काव्य के केवल कुरूप और सुन्दर दो रूप होते है इसके अतिरिक्त कुछ नहीं। शुक्ल ने कल्पना को काव्य का महत्वपूर्ण अंग माना है परन्तु उसे काव्य का साध्य नहीं मानते। वे कहते हैं– कल्पना काव्य का बोध–पक्ष है। कल्पना में आई हुई रूप–व्यापार योजना का कवि श्रोता को अन्तः साक्षात्कार द्वारा बोध होता है।उन्होंने कल्पना के भी दो प्रकार– ग्राहक कल्पना तथा विधायक कल्पना स्वीकार किए हैं।5

6 प्रकृति–चित्रण

आचार्य शुक्ल के प्रकृति चित्रण संबन्धी विचार भी मौलिक हैं। उनका मानना है कि वाक्य में प्राकृतिक दृश्य हमारे सामने आलम्बन रूप में और उद्दीपन रूप मे उपस्थित हो सकते हैं। उन्होंने काव्य में प्रकृति के दोनों भावों कोमल व रौद्र को स्वीकार किया है। प्रकृति को ही विश्व–काव्यं मानते हुए कहते हैं– ये सभी विश्व रूपी महाकाव्य की भावनाएं हैं। स्वार्थ भूमि से परे,पहुंचे हुए सच्चे योगी या कवि ही इनके द्रष्टा होते हैं।

7 रीति–निरूपण

आचार्य शुक्ल का रीति निरूपण वामन से भिन्न है।उनके विचार आनन्दवर्ध्रन व पाश्चात्य विद्वान वाल्टर पेंटर से प्रभावित हैं। उन्होंने बुद्धितत्व तथा आत्मतत्व का समन्वय करके रीति–तत्व का निरूपण किया है। उन्होंने रीति निरूपण में रीति के केवल भाषा–तत्व का विवेचन किया है।6

8 वक्रोक्ति–विरूपण

आचार्य शुक्ल ने चिन्तामणि–1 में काव्य में वक्रोक्ति तथा चमत्कार को अनिवार्य माना है। उन्होंने स्पष्ट किया है–चमत्कार से हमारा तात्पर्य उक्ति के चमत्कार से है, जिसके अन्तर्गत वर्ण–विन्यास की विशेषता, शब्दों की क्रीडा, वाक्य की वक्रता या वचन भंगी तथा अप्रस्तुत वस्तुओं का अद्भुत अथवा प्रस्तुत वस्तुओं के साथ उनके सादृश्य या संबन्ध की अनहोनी या दूरारूढ कल्पना इत्यादि बातें आ जातीं हैं। उन्होंने उक्ति–वैचित्र्य का विरोध किया है।

व्यावहारिक–समीक्षा

शुक्ल ने सैद्धान्तिक आलोचना व व्यावहारिक आलोचना में सामंजस्य स्थापित किया है। व्यावहारिक आलोचना उनके ग्रंथ गोस्वामी तुलसीदास, हिन्दी साहित्य का इतिहास जायसी ग्रंथावली एवं भ्रमर गीत सार में स्पष्ट दिखाई देती है। उनकी समस्त व्यावहारिक आलोचना को मुख्यतः दो वर्गों में बांटा जा सकता है।

क कवियों पर लिखी गई समीक्षाएं
ख काव्यधाराओं पर लिखी गई समीक्षाएं

आचार्य शुक्ल ने अपने समय के श्रेष्ठ कवियों पर अपनी व्यावहारिक समीक्षा प्रस्तुत की हैं। तुलसी उनके प्रिय कवि और रामचरितमानस प्रिय ग्रंथ है। सूर काव्य की भी उन्होंने प्रंशसा तो

की है परन्तु सामाजिक नैतिक आदि कारणों से वे सूरदास के प्रति तनिक कठोर प्रतीत होते हैं।काव्यधाराओं पर भी उनकी समीक्षाएं बडा महत्व रखतीं हैं।छायावाद, रहस्यवाद ,आदि पर उनकी व्यावहारिक समीक्षा बहुत सुन्दर हैं।

डॉ मनोहर लाल गौड ने इस विषय पर अपनी महत्व पूर्ण टिप्पणी करते हुए कहा है–सबसे महत्व की बात यह है कि उन्होंने बहुत पढा है,पढे को समझा है,समझे को पचाया है ओर पचाए हुए को ही लिखा है। शुक्ल जी की लेखनी से ऐसी कोई बात नहीं निकली, जिस पर उन्होंने गहराई से विचार नहीं किया ।

इस तरह निस्सन्देह शुक्ल जी की आलोचना दूसरों के लिए आदर्श है। उनकी सबसे बडी विशेषता यह है कि वे प्रत्येक विषय पर अधिकार के साथ विवेचन करते हैं तथा उनकी आलोचना पद्धति परवर्ती आलोचकों के लिए पथप्रदर्शक का काम करती है।

सन्दर्भ सूचि

1. विश्वनाथ त्रिपाठी हिन्दी आलोचना पृ 87
2. मधुरेश हिन्दी आलोचना का विकास पृ98
3. डॉ अमर पाथ हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली पृ 123
4. नन्द किशोर नवल हिन्दी आलोचना का विकास पृ 59
5. बच्चन सिंह आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द पृ 70
6. कालू राम परिहार हिन्दी आलोचना की परम्परा और रामविलास शर्मा पृ 97